पाठ्यक्रम - २९

२९.अ भक्ष्याभक्ष्य विवेक - जैन आहार विज्ञान

भक्ष्य का अर्थ खाने योग्य और अभक्ष्य का अर्थ नहीं खाने योग्य। जो वस्तुएँ विशेष जीव हिंसा में कारण हैं, स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं, प्रमाद वर्धक एवं बुद्धि विकार में कारण होती हैं, ऐसी वस्तुएँ अभक्ष्य कहलाती हैं।

अभक्ष्य पदार्थ भी मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं प्रथम तो जिनका सेवन करना, सर्वथा निषेध है, दूसरे वे, जो एक समय सीमा, परिस्थिति तक तो खाने योग्य होते हैं उसके बाद नहीं, वे अमर्यादित पदार्थ भी जीव हिंसा में कारण होने से त्यागने योग्य हैं।

अभक्ष्य पदार्थ अनेक प्रकार के हैं। कुछ का वर्णन यहाँ करते हैं :-

मद्य, मांस, मधु व नवनीत ये चार महाविकृतियाँ कही गई हैं अत: सर्वथा अभक्ष्य हैं।

मद्य (मदिरा, शराब) - अनेक फल-फूलादि को सड़ाकर शराब बनाई जाती है। इसमें अनेकों जीव उत्पन्न हो जाते हैं, इसे पीने वाला व्यक्ति बुद्धि और विवेक खो देता है। एक दो बार इनका सेवन करने वाला व्यक्ति फिर इतना आदी हो जाता है कि उसके बिना उसका किसी कार्य में मन ही नहीं लगता, धीरे-धीरे दरिद्रता उसे घेर लेती है। नशे की हालत में मारना-पीटना, गाली बकना, गंदी नालियों में पड़े रहना, आदि दुष्कृत्य उसके द्वारा हो जाते हैं। ऐसे ही अन्य पदार्थ गाँजा, भांग, अफीम, चरस, तम्बाकू, बीड़ी-सिगरेट, पान-मसाले आदि जो कि स्पष्ट ही कैंसर, हृदय रोग आदि बड़े-बड़े रोगों के कारण है तथा और भी तरह-तरह के नशीले पदार्थ भी अभक्ष्य की ही श्रेणी में आते हैं।

मांस - जीव/प्राणियों की हत्या करके ही मांस प्राप्त होता है अत: मांसभक्षण करने वाले को नियम रूप से हिंसा का पाप लगता है। स्वयं मरे हुए पशु के मांस में भी अनन्त निगोदिया जीव होते हैं, मांस को अग्नि से गर्म करने पर भी वह जीव रहित नहीं होता उसमें तज्जाति(उसी पशु की जाति वाले) निगोदिया जीव निरन्तर उत्पन्न होते रहते हैं अत: मांस खाने योग्य तो दूर, छूने योग्य भी नहीं है। मांस व अन्न दोनों प्राणियों के अंग होने से समान है ऐसा कहना योग्य नहीं है स्त्रीपने की अपेक्षा समानता होने पर जैसे माता और पत्नी एक नहीं है उसी प्रकार मांस के सेवन से जैसे नरकादि दुर्गति प्राप्त होती है। वैसे अन्न, वनस्पतियों के सेवन से नहीं।

मधु (शहद) - मधुमक्खियों की उगाल है। मांस के समान ही शहद कभी भी निगोदिया जीवों से रहित नहीं होता है। कई बार शहद प्राप्ति के लिए छत्ते को तोड़ दिया जाता है जिसके सैकड़ों मक्खियाँ मर जाती हैं। तथा शहद में सैकड़ों त्रस जीवों की उत्पत्ति होती रहती है। एक बूंद शहद के सेवन से सात गाँव को जलाने से भी अधिक पाप लगता है। मधुत्याग के दोष से बचने हेतु फूलों का रस अथवा आसव, गुलकन्द तथा अन्य शहद युक्त खाद्य पदार्थों का त्याग करना चाहिए।

नवनीत (मक्खन) - काम, मद (अभिमान, नशा) और हिंसा उत्पन्न करने वाला है। बहुत से उसी वर्ण, जाति के जीवों का उत्पत्ति स्थान भूत होने से नवनीत विवेकी जन के द्वारा खाने योग्य नहीं है। अन्तर्मुहूर्त पश्चात ही उसमें अनेक सूक्ष्म जीव उत्पन्न हो जाते हैं। जिस बर्तन में नवनीत पकाया जाता है वह बर्तन भी छोड़ने/ त्यागने योग्य हैं। नवनीत को निकालते ही तुरन्त गर्म कर लेने पर प्राप्त घी खाने योग्य है।

पाँच उदम्बर फल - बड़, पीपल, ऊमर, पाकर, कठूमर के फल, त्रस जीवों की उत्पत्ति स्थान ही हैं। अत: अभक्ष्य हैं। सूख जाने पर भी विशेष रागादि रूप भाव हिंसा का कारण होने से अभक्ष्य हैं। अनजान फल जिसका नाम, स्वाद आदि न पता हो वह भी अभक्ष्य है।

द्विदल अभक्ष्य है- जिसके दो भाग हों ऐसे दाल आदि को दही में मिलाने पर, तथा (मुख में उत्पन्न) लार के संयोग से असंख्य त्रस जीव राशि पैदा हो जाती है। इसका सेवन करने से महान हिंसा व त्रस जीवों के भक्षण का दोष लगता है। अत: द्विदल अभक्ष्य है इसका सर्वथा त्याग करना चाहिए जैसे दही बड़ा, दही की बड़ी, दही पापड़ आदि। कच्चे दूध से बना दही व छाछ

तथा गुड़ मिला दही व छाछ भी अभक्ष्य हैं।

घुना व संदिग्ध अन्न अभक्ष्य है- घुने हुए अन्न में अनेक त्रस जीव होते हैं यदि सावधान होकर नेत्रों के द्वारा शोधा भी जाए तो भी उसमें से सब त्रस जीवों का निकल जाना असम्भव है। अत: सैकड़ों बार शोधा हुआ भी घुना अन्न अभक्ष्य है। तथा जिस पदार्थ में त्रस जीवों के रहने का संदेह हो ऐसा अन्न भी त्यागने योग्य है।

कंदमूल (गडन्त) अभक्ष्य है- कंद अर्थात् सूरण, मूली, गाजर, आलू, प्याज, लहसुन, गीली हल्दी आदि जमीन के भीतर पैदा होने वाली गड़न्त वस्तुएँ साधारण वनस्पति, अनन्तकाय होने से अभक्ष्य है अन्य वनस्पतियों की अपेक्षा इनमें अधिक हिंसा होती है। अत: जीवदया पालने वालों को इनका सेवन नहीं करना चाहिए।

पुष्प व पत्रादि अभक्ष्य हैं- जो बहुत जन्तुओं की उत्पत्ति के आधार के हैं जिनमें नित्य त्रस जीव पाए जाते हैं, ऐसे केतली के फूल, द्रोण पुष्पादि सम्पूर्ण पदार्थों को जीवन पर्यन्त के लिए छोड़ देना चाहिए क्योंकि इनके खाने में फल थोड़ा और घात बहुत जीवों का होता है तथा पत्ते वाले शाक में सूक्ष्म त्रस जीव अवश्य होते हैं उसमें कितने ही जीव तो दृष्टिगोचर हो जाते हैं और कितने ही दिखाई नहीं देते। किन्तु वे जीव उस पत्ते वाले शाक का आश्रय कभी नहीं छोड़ते। अत: अपना आत्म कल्याण चाहने वाले जीव को पत्ते वाले सब शाक तथा पान तक छोड़ देना चाहिए।

जिनका रूप, रस, गन्ध व स्पर्शादि चलित हुआ, विकृत हुआ है, फफूंद लगा हो ऐसे त्रस व निगोद जीवों का स्थान, स्वास्थ्य के लिए हानिकारक पदार्थ भी अभक्ष्य कहे गए हैं।

होटल में अमर्यादित एवं अशोधित आटे आदि से तथा अनछने पानी से बनी वस्तुएँ सर्वथा अभक्ष्य हैं। अमर्यादित अचार, मुरब्बा आदि त्रस जीवों से संसक्त होने से अभक्ष्य हैं।

कुछ पदार्थ भक्ष्य होने पर भी अनिष्टकारक होने से अभक्ष्य माने जाते हैं जैसे बुखार वाले को घी एवं शीत प्रकृति वालों के लिए ठंडे फल आदि। जो सेवन करने योग्य न हो ऐसे लार, मूत्र, कफ आदि अनुपसेव्य पदार्थ भी अभक्ष्य हैं।

अभक्ष्य बाईस भी माने गए हैं-

ओला घोर बड़ा निशि भोजन, बहुबीजा बैंगन संधान ।
बड़, पीपर, ऊमर, कठऊमर, पाकर फल या होय अजान ।।
कंदमूल माटी विष आमिष, मधु माखन अरु मदिरापान।
फल अतितुच्छ तुषार चलित रस, ये बाईस अभक्ष्य बखान ।।

मौनी मौन से सौ को हराता किन्तु स्वयं जीतता

दूध को दुहने के पश्चात् अड़तालीस (४८) मिनिट के भीतर ही भीतर गर्म कर लेना चाहिए अन्यथा वह भी अभक्ष्य की कोटि में आ जावेगा, क्योंकि दूध के दुहने के एक मुहूर्त पश्चात् तज्जाति निगोद जीव उत्पन्न हो जाते हैं। अत: दूध की मर्यादा का विशेष ख्याल रखना चाहिए।

भक्ष्य पदार्थों की मर्यादा निम्न प्रकार से है-

१. दूध उबलने के बाद चौबीस घंटे तक मर्यादित माना जाता है।
२. गर्म दूध का दही जमाने पर चौबीस घंटे तक मर्यादित माना जाता है। बिलौते समय पानी डालने पर बनी छाछ बारह घंटे तक मर्यादित मानी गई है। मीठे पदार्थ मिले दही की मर्यादा ४८ मिनट की है।
३. पिसे नमक की मर्यादा अड़तालीस मिनट एवं गर्म कर पीसे गए नमक की मर्यादा चौबीस घंटे की हैं एवं मसालेदार नमक की छह घंटे की मर्यादा है।
४. मौन वाले पकवान की मर्यादा चौबीस घंटे, रोटी, पूड़ी, हलवा, बड़ा, कचौड़ी की मर्यादा बारह घंटे एवं खिचड़ी, दाल, सब्जी की मर्यादा छह घंटे की है।
५. आटा, बेसन एवं पिसे मसाले की शीतकाल में सात दिन, ग्रीष्म काल में पाँच दिन एवं वर्षाकाल में तीन दिन की मर्यादा जाननी चाहिए।
६. घी, गुड़, तेल को स्वाद बिगड़ने पर अभक्ष्य माना जाता है।
७. चौबीस घंटे के बाद का मुरब्बा, आचार, बड़ी पापड़ आदि खाने योग्य नहीं हैं।

भोजन मंत्र

अमृत भोजन अमृत कण-कण,
अमृत प्रकृति का उपहार।
तन मन वचन स्वस्थ सब होगा,
ऐसा हो सबका आहार।।
प्रभु शक्ति देना भक्ति देना,
देना सुखमय हो व्यवहार।
नमन हमारा परम प्रभ को,
फैले घर-घर मंगलाचार।।
ऊँ शान्ति... ऊँ शान्ति... ऊँ शान्ति

पाठ्यक्रम - २९

२९.ब कर्म निर्जरा का साधन - परीषह जय

मार्ग से च्युत न होने के लिए तथा कर्मों की निर्जरा के लिए क्षुधादि वेदना के होने पर जो सहा जाए वह परीषह है। दु:ख आने पर भी संक्लेश परिणाम न होना, शान्त भाव से सहन करना, परिषह का जीतना परीषह जय है। परीषह बाईस होते हैं वे इस प्रकार है :-

१. क्षुधा, २. तृषा, ३. शीत, ४. उष्ण, ५.दंशमशक, ६. नाग्न्य,
७. अरति, ८. स्त्री, ९.चर्या, १०.निषद्या, ११. शय्या, १२. आक्रोश, १३.वध,
१४. याचना, १५. अलाभ, १६. रोग, १७. तृण स्पर्श, १८. मल, १९. सत्कार-पुरस्कार,
२०. प्रज्ञा, २१. अज्ञान २२. अदर्शन परिषह।

1. आहार न मिलने पर, अन्तराय - उपवास होने पर उत्पन्न क्षुधा वेदना को समता पूर्वक सहन करना ''क्षुधा परीषह जय'' है।
2. ग्रीष्म कालीन तपन से, अंतराय आ जाने पर उत्पन्न प्यास की वेदना को शान्त भाव से सह लेना ''तृषा परीषह जय'' है।
3. बंदरों के भी मद को नष्ट करने वाली भयंकर सर्दी पड़ने पर, शीत लहर चलने पर संतोष रूपी कम्बल को धारण कर शीत वेदना को सहना ''शीत परीषह जय'' है।
4. ग्रीष्म ऋतु में गरम-गरम हवाओं के चलने पर, विहार में मार्ग तप जाने, गले और तालू सूख जाने पर भी प्राणियों की रक्षा का विचार करते हुए कष्टों को सहन करना ''उष्ण परीषह जय'' है।
5. डांस, मच्छर, मक्खी, खटमल, बिच्छू आदि डसने वाले जन्तु आदि के काटने पर उत्पन्न पीड़ा को अशुभ कर्मों का उदय मानकर शान्त भाव से सहन करना ''दंशमशक परीषह'' है।
6. वस्त्र रहित जिनलिंग को देखकर अज्ञानियों द्वारा उपहास करने पर, लोगों द्वारा अपशब्द कहने पर मन में किसी प्रकार का विकार नहीं लाना, खेद नहीं करना ''नाग्न्य परीषह जय'' है।
7. प्रतिकूल वसतिका, क्षेत्रादि मिलने पर, भूख-प्यास की वेदना होने पर संयम के प्रति अप्रीति नहीं करना, पूर्व में भोगे हुए सुखों का स्मरण नहीं करना ''अरति परीषह जय'' है।
8. एकान्त स्थान में स्त्रियों द्वारा अनेक कुचेष्टाएं करने पर, रिझाने का प्रयास करने पर उनके राग में नहीं फँसना ''स्त्री परीषह जय'' है।
9. गमन करते समय कांटा चुभने पर, छाले पड़ने पर, पैर छिल जाने पर, कंकड़ आदि चुभने पर भी प्रमाद रहित ईर्यापथ का पालन करते हुए खेद-खिन्न नहीं होना ''चर्या परीषह जय'' है।
10. भयंकर श्मशान, वन, पहाड़, गुफा आदि में बैठकर ध्यान करते समय नियमित काल पर्यन्त स्वीकृत आसन से विचलित नहीं होना ''निषद्या परीषह जय'' है।
11. छह आवश्यक कर्म, स्वाध्याय, ध्यान आदि करने से उत्पन्न थकान दूर करने के लिए कठोर कंकरीले आदि स्थानों पर एक करवट से निद्रा लेना, उपसर्ग आने पर भी शरीर को चलायमान नहीं करना ''शय्या परीषह जय'' है।
12. क्रोधादि के निमित्त मिलने पर, प्रतीकार की क्षमता होते हुए भी क्षमा धारण करते हुए शान्त रहना ''आक्रोश परीषह जय'' है।
13. तलवार आदि शस्त्रों के द्वारा, कंकड़-पत्थर द्वारा, शरीर पर प्रहार करने वालों से भी द्वेष नहीं करना, शान्त रहना ''वध परीषह जय'' है।
14. शरीर कृश होने पर, औषध आदि की आवश्यकता होने पर दीन वचनों से, मुख म्लानता, हाथ के संकेत से औषधादि नहीं माँगना ''याचना परीषह जय'' है।
15. कई दिनों तक आहार न मिलने पर भी संतोष धारण करना, ''अलाभ परीषह जय'' है।

जो क्षण बीता
क्या लौट फिर आया
आगे की सोच

16. अनेक प्रकार की व्याधि कुष्ट रोग, जलोदर रोग आदि होने पर उनके उपशम करने की सामर्थ्य होने पर भी उसका इलाज नहीं करना, कर्म विनाश की इच्छा से सहन करना ''रोग परीषह जय'' है।

17. कठोर स्पर्श वाले तृण, काष्ठ फलक आदि पर बैठना, शयन करना, उसमें उत्पन्न पीड़ा को सहन करना ''तृष स्पर्श परीषह जय'' है।

18. शरीर पर मैल, पसीना जम जाने पर उसे दूर करने का विचार नहीं करना ''मल परीषह जय'' है।

19. अपने गुणों में अधिकता होने पर भी यदि कोई सत्कार न करे, आगे-आगे न करे, प्रशंसा न करे तो भी चित्त में व्याकुलता नहीं होना तथा प्रशंसा होने पर भी प्रसन्न न होना ''सत्कार पुरस्कार परीषह जय'' है।

20. न्याय, व्याकरण, आध्यात्म आदि ज्ञान की अधिकता होने पर भी मान (मद) नहीं करना ''प्रज्ञा परीषह जय'' है।

21. बार-बार अभ्यास करते हुए भी ज्ञान की उपलब्धि न होने पर लोगों के द्वारा किए गए तिरस्कार को समता पूर्वक सहन करना ''अज्ञान परीषह जय'' है।

22. बहुत समय तक कठोर तपस्या करने पर भी विशेष ज्ञान या ऋद्धियाँ प्राप्त नहीं होने पर भी दर्शन के प्रति अश्रद्धा भाव नहीं रखना ''अदर्शन परीषह जय'' है।

अध्यात्म गीत

हूँ चैतन्य चिदानंद धाम, जानन देखन मेरा काम...।।
निज से निज की हो पहचान, लीन रहूँ निज में अविराम।
हो जाऊँ निर्मल निष्काम, अनंत शाश्वत सिद्ध समान।। हूँ..।।
विषय कषाय दुख की खान, आत्मज्ञान सुख शांति निधान।
किंतु मोहवश खोया ज्ञान, बना विकारी धर अज्ञान।। हूँ..।।
पर को निज का कर्त्ता जान, निज को पर का कर्त्ता मान।
किया नहीं निज का कल्याण, रहते निज व्याकुल परिणाम।। हूँ..।।
निज स्वरूप का करके पान, शुद्धातम को करूँ प्रणाम।
प्रगट होय निज आतम राम, लक्ष्य यही पाऊँ शिवधाम।। हूँ..।।
निश्चय नय से हूँ भगवान, कहे गुरु तू स्वयं महान।
''पूर्ण'' स्वयं में तू गुणखान ''विद्यागुरु'' का कर गुणगान।। हूँ..।।

● कार्य की सफलता का सबसे बड़ा सूत्र है चञ्चलता को कम करना। दुनिया में जितना सत्य खोजा गया, अचंचलता, मन की एकाग्रता, एकान्त की स्थिति में खोजा गया। जिसने अपनी चंचलता को कम किया है वह कार्य में ज्यादा सफल होता है। दस घण्टे का काम पाँच घण्टे में निपटाया जा सकता है यदि हमारी एकाग्रता हो तो अन्यथा दस दिन में भी संभव नहीं ।

● याद रखना, कभी- कभी महत्त्वपूर्ण होता है जबकि भूल जाना अक्सर ज्यादा उपयोगी सिद्ध होता है।

४६. तुम्हें छोड़कर

तुम्हें छोड़कर किसको देखूँ, किसको पाऊँ दुनिया में।
चरणों आऊँ, शीश झुकाऊँ, आप अलौकिक दुनिया।।
जिस पल तुमको देखा भगवन्, उस पल जो आनन्द मिला।
मुझको ऐसा लगा कि भगवन्, सिद्ध शिला में जन्म लिया।।
तुम्हें .....।।
वीतरागता झर-झर झरती, क्या तुमको झरना कह दूँ।
वात्सल्य की धारा बहती, क्या तुमको सरिता कह दूँ।।
तेरे पद आनन्द सरोवर, और कहाँ इस दुनिया में।
चरणों आऊँ, शीश झुकाऊँ, आप अलौकिक दुनिया में।।
तुम्हें .....।।
क्या तुमको उपहार चढ़ाऊँ, भव-भव से मैं हार गया।
हृदय हार मैं तुम्हें बनाऊँ, तुमने भव से तार दिया।।
जब-जब मुझको जन्म मिले नव, आप मिले इस दुनिया में।
चरणों आऊँ, शीश झुकाऊँ, आप अलौकिक दुनिया में।।
तुम्हें .....।।
वीतराग सर्वज्ञ देव तुम, बैठे हो जिन मंदिर में।
भक्त तुम्हारा तुम्हें पुकारे, आन बसो मन मंदिर में।।
मन मंदिर में आन बसो तो, कहीं न भटकूँ दुनिया में।
चरणों आऊँ, शीश झुकाऊँ, आप अलौकिक दुनिया में।।
तुम्हें .....।।

.....

वह फूल नहीं वह कंटक है जिसमें सौरभ का सार नहीं। मत कहो उसे हरगिज वीणा जिसमें बजती झंकार नहीं।।
वह जीवित नहीं मरा हुआ है जो करता पर उपकार नहीं। वह हृदय नहीं पत्थर है जिसमें जिनधर्म से प्यार नहीं।।

श्री प्रश्नोत्तर रत्नमालिका

प्रणिपत्य वर्द्धमानं प्रश्नोत्तर-रत्नमालिकां वक्ष्ये।
नागनरामरवन्द्यं देवं देवाधिपं वीरम्॥ 1॥

अर्थ : (नागनरामरवन्द्यं) नागेन्द्र, मनुष्य और देवों से वंदनीय **(देवं)** स्वयं देवस्वरूप **(देवाधिपम्)** देवों के अधिपति **(वीरम्)** वीर **(वर्द्धमानं)** वर्द्धमान भगवान को **(प्रणिपत्य)** नमस्कार करके **(प्रश्नोत्तर-रत्नमालिकां)** प्रश्नोत्तर रत्नमालिका को **(वक्ष्ये)** कहूँगा।

कः खलु नालंक्रियते दृष्टादृष्टार्थ - साधनपटीयान्।
कण्ठस्थितया विमलप्रश्नोत्तररत्नमालिकया॥ 2॥

अर्थ : (कण्ठस्थितया) कण्ठ में स्थित **(विमल प्रश्नोत्तर-रत्न-मालिकया)** अच्छे प्रश्न-उत्तर की रत्नमाला से **(दृष्टा-दृष्टार्थ साधनपटीयान्)** दृष्ट और अदृष्ट अर्थ को साधने में प्रवीण **(कः)** कौन व्यक्ति **(न खलु अलंक्रियते)** विभूषित नहीं होगा? अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति होगा।

भगवन् कि मुपादेयं गुरुवचनं हेयमपि च किमकार्यम्।
को गुरुरधिगततत्त्वः सत्त्वहिताभ्युद्यतः सततम्॥ 3॥

अर्थ : (भगवन्) हे भगवन्! **(किम्)** क्या **(उपादेयम्)** उपादेय है? **(गुरुवचनम्)** गुरु वचन उपादेय हैं **(च)** और **(हेयम् अपि)** हेय भी **(किम्)** क्या है? **(अकार्यम्)** नहीं करने योग्य कार्य हेय हैं **(गुरुः)** गुरु **(कः)** कौन है? **(अधिगत तत्त्वः)** जिसने तत्त्वों को समझ लिया है, वह तथा **(सततम्)** जो निरंतर **(सत्त्व-हिताभ्युद्यतः)** सभी प्राणियों के हित में लगा रहता है।

त्वरितं कि कर्त्तव्यं विदुषा संसार-सन्ततिच्छेदः।
किं मोक्षतरोर्बीजं सम्यग्ज्ञानं क्रियासहितम्॥ 4॥

अर्थ : (विदुषा) बुद्धिमान व्यक्ति के द्वारा **(त्वरितं)** शीघ्र **(किम्)** क्या **(कर्त्तव्यम्)** करना चाहिए ? **(संसार-सन्ततिच्छेदः)** संसार की परम्परा सन्तति का छेद करना चाहिए **(मोक्षतरोः)** मोक्ष रूपी वृक्ष का **(बीजम्)** बीज **(किम्)** क्या है ? **(सम्यग्ज्ञानम्)** वह सम्यग्ज्ञान जो **(क्रिया सहितम्)** क्रिया से सहित है।

किं पथ्यदनं धर्मः कः शुचिरिह यस्य मानसं शुद्धम्।
कः पण्डितो विवेकी किं विषमवधीरिता गुरवः॥ 5॥

अर्थ : (पथि) मार्ग में **(अदनम्)** भोजन **(किम्)** क्या है? **(धर्मः)** धर्म है। **(इह)** इहलोक में **(शुचिः)** पवित्र। **(कः)** कौन है ? **(यस्य)** जिसका **(मानसं शुद्धम्)** मानस शुद्ध है। **(कः पण्डितः)** पण्डित कौन है **(विवेकी)** विवेकी जीव, **(किं विषम्)** जहर क्या है? **(गुरवः अवधीरिताः)** गुरुओं का तिरस्कार।

किं संसारे सारं बहुशोऽपि विचिन्त्यमानमिदमेव।
मनुजेषु दृष्टतत्त्वं स्वपरहितायोद्यतं जन्म॥ 6॥

अर्थ : (संसारे) संसार में **(सारं किम्)** सार क्या है? **(बहुशः अपि)** बहुत बार भी **(विचिन्त्यमानम्)** चिन्तन करते हुए **(इदम् एव)** यह ही है कि **(मनुजेषु जन्म)** मनुष्य जन्म पाकर **(दृष्ट तत्त्वम्)** तत्त्वदर्शी होते हुए **(स्व-पर-हिताय)** स्व-पर हित के लिए **(उद्यतं)** उद्यत रहना।

मदिरेव मोहजनकः कः स्नेहः के च दस्यवो विषया।
का भववल्ली तृष्णा को वैरी नन्वनुद्योगः॥ 7॥

अर्थ : (मदिरा इव) मदिरा के समान **(मोहजनकः)** मोह उत्पन्न करने वाला **(कः)** कौन है ? **(स्नेहः)** स्नेह है। **(के च दस्यवः)** और लुटेरे कौन हैं? **(विषयाः)** विषय हैं। **(भववल्ली)** संसार की लता **(का)** क्या है? **(तृष्णा)** तृष्णा है। **(वैरी कः)** कौन वैरी है? **(ननु)** वास्तव में **(अनुद्योगः)** पुरुषार्थ **(उद्योग)** नहीं करना ही अपना दुश्मन है।

कस्माद्भयमिह मरणादन्धादपि को विशिष्यते रागी।
कः शूरो यो ललनालोचनबाणैर्न च व्यथितः॥ 8॥

अर्थ : (इह) इस लोक में **(कस्मात् भयम्)** भय किससे है? **(मरणात्)** मरण से है। **(अन्धात् अपि)** अंधे से भी **(कः)** कौन **(विशिष्यते)** बढ़कर है? **(रागी)** रागी जीव **(कः शूरः)** शूर कौन है ? **(यः)** जो **(ललना-लोचन-बाणैः)** स्त्री के नेत्ररूपी बाणों से **(न च व्यथितः)** पीड़ित नहीं हुआ।

पातुं कर्णाञ्जलिभिः किममृतमिव बुध्यते सदुपदेशः।
किं गुरुताया मूलं यदेतदप्रार्थनं नाम॥ 9॥

अर्थ : (कर्णाञ्जलिभिः) कर्णरूपी अञ्जलि से **(पातुम्)** पीने के लिए **(अमृतम् इव)** अमृत के सामन **(किम् बुध्यते)** क्या जाना जाता है **(सदुपदेशः)** सदुपदेश **(गुरुतायाः मूलम्)** बड़प्पन का मूल कारण **(किम्)** क्या है? **(एतत् यत्)** यह कि **(अप्रार्थनम् नाम)** अयाचक वृत्ति।

किं गहनं स्त्रीचरितं कश्चतुरो यो न खण्डितस्तेन।
किं दारिद्र्यमसंतोष एव किं लाघवं याञ्चा॥ 10॥

अर्थ : (किं गहनम्) जानने में जटिल क्या है? **(स्त्री-चरितम्)** स्त्री का चरित्र। **(कःचतुरः)** कौन चतुर है? **(यः)** जो **(तेन)** उस स्त्री के चरित्र से **(न खण्डितः)** टूटा नहीं। **(किं दारिद्र्यम्)** दरिद्रता क्या है? **(असंतोषः)** असंतोष है। **(एवं)** इसी प्रकार **(किं लाघवम्)** लघुता क्या है? **(याञ्चा)** याचना।

किं जीवितमनवद्यं किं जाड्यं पाटवेऽप्यनभ्यासः।
को जागर्ति विवेकी का निद्रा मूढता जन्तोः॥ 11॥

अर्थ : (किं जीवितम्) जीवन क्या है? **(अनवद्यम्)** दूषण रहित होना। **(जाड्यं किम्)** जड़ता क्या है? **(पाटवे अपि अनभ्यासः)** चतुर होने पर भी अभ्यास नहीं करना। **(कः जागर्ति)** कौन जाग्रत है? **(विवेकी)** विवेकी जीव। **(का निद्रा)** निद्रा क्या है? **(जन्तोः)** प्राणी की **(मूढता)** मूढ़ता।

नलिनीदलगतजललवतरलं किं यौवनं धनमथायुः।
के शशधरकरनिकरा-नुकारिणः सज्जना एव॥ 12॥

अर्थ : (नलिनी-दल-गत-जल-लव-तरलम्) कमल के पत्ते पर छोटी बूँदों के समान क्षणभंगुर **(किम्)** क्या है? **(यौवनम्)** यौवन **(धनम्)** धन **(अथ)** और **(आयुः)** आयु है। **(शश-धर-कर-निकरा-नुकारिणः)** चन्द्रमा की किरणों के समूहों का अनुकरण करने वाले **(के)** कौन हैं? **(सज्जना एव)** सज्जन पुरुष ही हैं।

को नरकः परवशता किं सौख्यं सर्वसंगविरतिर्या।
किं सत्यं भूतहितं किं प्रेयः प्राणिनामसवः॥ 13॥

अर्थ : (कः नरकः) नरक क्या है? **(परवशता)** पराधीन होना। **(सौख्यं किम्)** सुख क्या है? **(या)** जो **(सर्व-संग-विरतिः)** समस्त परिग्रह से विरति है, वह सुख है। **(सत्यं किम्)** सत्य क्या है? **(भूतहितम्)** प्राणियों को अपने प्राण।

किं दानमनाकाडक्षं किं मित्रं यन्निवर्तयति पापात्।
कोऽलंकारः शीलं, किं वाचां मण्डनं सत्यम्॥ 14॥

अर्थ : (दानं किम्) दान क्या है? **(अनाकाङ्क्षम्)** आकांक्षा से रहित होकर देना ही दान है। **(मित्रं किम्)** मित्र कौन है? **(यत् पापात्)** जो पाप से **(निवर्तयति)** रोकता है। **(अलंकारः कः)** आभूषण क्या है? **(शीलम्)** शील है। **(वाचां)** वचनों का **(मण्डनं किम्)** आभूषण क्या है? **(सत्यम्)** सत्य है।

किमनर्थफलं मानसमसंगतं का सुखावहा मैत्री।
सर्वव्यसनविनाशे को दक्षः सर्वथा त्यागः॥ 15॥

अर्थ : (अनर्थ फलम्) अनर्थ का फल क्या है? **(असंगतं मानसम्)** मन का व्यथित होना। **(सुखावहा का)** सुख देने वाली चीज क्या है? **(मैत्री)** मैत्री भावना। **(सर्व-व्यसन-विनाशे)** समस्त दुःखों के नाश में **(कः दक्षः)** कौन समर्थ है? **(सर्वथा त्यागः)** सर्व प्रकार से त्याग करना।

निर्णय एक बार, प्रयत्न बार-बार

मेरे अर्हत् पावन है

मेरे अर्हत् पावन है, करुणा के तो सावन है।
जन्म-मृत्यु दोनों ही तट से, पार लगा दे जो नैया।।
अर्हत् राम रमैय्या बोलो।।
मिट्टी के घर में बैठा है, अजर अमर अविनाशी।
बंद पिजरा पंख शिथिल हैं, और चेतना प्यासी।
जल पोखर में डूब रहा है, सागर का तैरेय्या।।
अर्हत् राम....।।
मिट्टी सान रही मिट्टी को, चकित है हंस बेचारा।
शाख-शाख पे डोल रहा है, मिला न कोई सहारा।
सुख के सारे दाने चुग गई, देखो दे काल चिरैया।।
अर्हत् राम....।।
आती-जाती साँसों के संग, एक मुसाफिर ठहरा।
बाहर देखो घात लगाए, मरण दे रहा पहरा।
सूरज डूबा तत्क्षण जागा, चलने लगी पुरवैया।।
अर्हत् राम....।।
मिट्टी काया मिट्टी माया, क्यों इसमें तू डूब रहे।
काया माया दोनों छाया, क्षण भर में ये बदल रहे।
प्रभुध्यान ही काम आएगा, सब जन के जो खिवैय्या।।
अर्हत् राम....।।

लिखा है ऐसा लेख

लिखा है ऐसा लेख भैया लिखा है ऐसा लेख।
मेरे दोनों हाथों में ऐसी लकीर है-२
बाबा से मिलन होगा ऐसी तकदीर है।।
किस्मत का लिखा कोई मिटा नहीं पायेगा।
मिलेगा कहाँ वो कैसा समय ही बतायेगा।।
हाथों में उल्लेख इसका हाथों में उल्लेख।। १।।
लिखा है ऐसा लेख
लिखता है लिखने वाला कर्मों का लेखा।
लकीरों में लिखी है रे कर्मों की रेखा।।
इसमें मीन न मेख भैया इसमें मीन न मेख।। २।।
लिखा है ऐसा लेख
मैंने तो किया है खुद को उसके हवाले।
वही दयावान स्वामी मुझको संभाले।।
उसने खींची रेख रे भैया उसने खींची रेख।। ३।।

व्रती बनने की प्रेरणा

बारामती के दानवीर सेठ तुलजारामजी आचार्यश्री शांतिसागर जी के अनन्य भक्त थे, जिन्होंने साठ हजार की बोली लेकर कुंथलगिरि में देशभूषण कुलभूषण भगवान् की प्रतिमा विराजमान करवाई थी।

आचार्यश्री उन्हें बार-बार व्रत लेने के लिए प्रेरित करते थे। एक बार महाराजश्री ने स्पष्टतः कहा- ''तुम्हारे व्रत लेने के भाव नहीं होते, इससे ऐसा लगता है कि तुम्हारी किसी कुगति या नरकगति का बंध हो गया है, क्योंकि तीन आयुओं का बन्ध होने पर जीव को संयम लेने के परिणाम नहीं होते।''

सेठ तुलजारामजी अपनी व्रत न ले पाने की कमजोरी को छिपाते हुए कहने लगे-''हमारी छह पीढ़ियों में मुझसा भाग्यशाली नहीं हुआ है, जिसने आप-जैसे श्रेष्ठ वीतरागी गुरु का दर्शन का सौभाग्य लिया हो। रही त्याग की बात, वह तो कभी भी पूर्ण हो जाएगी। लेकिन महाराज जब अव्रती श्रावक भी स्वर्ग जाता है और व्रती श्रावक भी तो व्रती बनने की क्या जरूरत है?'' उत्तर में परम पूज्य आचार्यश्री बोले-''व्रती के देवगति जाने का नियम है, परन्तु अव्रती के कोई पक्का नियम नहीं है।''

सेठजी पुनः कहने लगे -''महाराजश्री आप मुझको जबरदस्ती व्रत लेने के लिए क्यों बार-बार कहते हैं ?''

महाराजश्री का अनुकम्पा भरा हृदय भाव देखें -''वे बोले स्वर्ग जाते समय हमें अपना दूसरा साथी चाहिए-सोवती पाहिजे। फिर कोई दूसरा शान्तिसागर आकर नहीं कहेगा।''

इतना सुनते ही सेठ साहब प्रायश्चित भाव से इतने विगलित हो गये कि शिरोनति होकर बोले - ''महाराज! मुझे तो बस आपकी आज्ञा ही शिरोधार्य है। मुझे कृतार्थ करें।''

सेठजी की स्वीकारोक्ति पाकर आचार्यश्री ने उनके सिर पर पिच्छी रख दी और यथोचित व्रत देते हुए आशीर्वाद दिया-''तुम्हारा कल्याण हो, धर्मवृद्धि हो। मुझे तुम्हें व्रत देते हुए आनन्द की अनुभूति हो रही है।'' गुरु-शिष्य की परम्परा की यह अनोखी आत्मीय वात्सल्यता क्या कहीं अन्यत्र देखने को मिल सकती है?

क्षत्रिय धर्म

घटना सन् 1927, इस्लामपुर की है-

आचार्यश्री शांतिसागर जी संघ सहित, वहाँ से विहार करने वाले थे। जिन धर्म विद्वेषियों ने संगठन कर यह निश्चित किया कि इन सभी नग्न साधुओं को लंगोटी पहनाकर गाँव से निकलने देंगे।

साधुओं पर अप्रत्याशित रूप से आए संकट का मुकाबला करने के लिए हजारों क्षत्रिय धर्म वाले जैन तलवार, बन्दूक, भाला आदि लेकर इकट्ठे हो गए।

उस समय संघ में विद्यमान मुनि श्री चन्द्रसागरजी ने लोगों से कहा कि-वे शान्त रहें उत्तेजित न हों।

आचार्यश्री ने जब यह सुना तो उन्होंने मुनिश्री से कहा - इस समय शान्ति का आदेश असामयिक है।

जब धर्म की प्रतिष्ठा को आँच आने लगे तब उसकी रक्षा के लिए जो भी संभव हो, करना चाहिए। यह शान्त रहने का मौका नहीं है। जब विधर्मी, निर्ग्रन्थ साधुओं को वस्त्र पहनाने की तैयारी कर रहे हों, उस समय समर्थ धार्मिक लोगों को चुप होकर नहीं बैठ जाना चाहिए।

परिस्थिति के अनुसार प्रवृत्ति करने का जैनधर्म का आदेश है। क्षत्रिय वृत्ति के काल में, वैराग्यपना दिखाने से सद्धर्म संरक्षण नहीं हो सकता।

इस समय आचार्यश्री की दृष्टि एक तेजस्वी क्षत्रिय धर्म के अनुरूप थी, जो अहिंसा का परम तेजस्विता का ही रूप था।

चार मूर्ख

किसी गाँव में चार मूर्ख मित्र रहते थे। बिना विचारे जो किसी कार्य को करता है वह मूर्ख कहलाता है। ऐसे ही वे चारों मित्र एक दिन घूमते-घूमते गाँव के बाहर दूर निकल गए। जब उन्हें भूख लगी तब ध्यान आया अरे हमारे पास खाने के लिए तो कुछ सामग्री है नहीं। अब हम क्या करें? तभी उन्होंने सामने खेत देखा जिसमें चने लगे हुए थे। अत: आपस में कहने लगे चलो चने खाकर ही अपना पेट भरें और खेत में घुसकर चने खाने लगे। तभी खेत का मालिक आया। उन चारों को देखकर सोचने लगा अरे! ये कौन हैं, इस तरह कैसे चने खा रहे हैं। इन्हें कैसे रोका जाए। उसने सोचा ये चारों तो हट्टे - कट्टे हैं और मैं अकेला। अत: कुछ युक्ति से काम लेना चाहिए नहीं तो मेरी फसल ही चौपट हो जाएगी।

वह कुछ विचार करता हुआ उनके पास पहुँचा और मीठे शब्दों में कहने लगा आप कौन सज्जन हैं? कृपया अपना परिचय देने का कष्ट करेंगे। वे बोले तू कौन होता है हमारा परिचय पूछने वाला। तब वह विनम्रता से बोला मैं आपका सेवक हूँ। आपकी अच्छे से आव भगत सेवा कर सकूँ इसीलिए परिचय पूछता हूँ। उन्होंने सोचा ये हमारी सेवा करेगा अत: सभी ने अपना परिचय देना प्रारम्भ कर दिया।

सबसे पहले मूछों पर ताव देता हुआ पहला व्यक्ति बोला - मैं जमींदार ठाकुर समशेर सिंह हूँ ये सारी भूमि हमारे ही दादाओं की है। इतना सुनते ही किसान बोला - अरे ठाकुर साहब आप इस जमीन के मालिक होकर नीचे बैठकर चने खाएँ। अच्छा नहीं लगता। सामने ही आम का पेड़ लगा है आप उसके नीचे बैठकर इत्मिनान से चने खाइए मैं स्वयं आपके लिए तोड़कर दिए देता हूँ। ऐसा कहने पर वह स्वयं उठकर आम के पेड़ के नीचे चला गया।

अब दूसरे ने अपना परिचय दिया मैं पंडित चेतराम पाण्डे। इतना कहना ही था कि वह तुरंत पण्डित जी के पैर पर गिर पड़ा और कहने लगा - भगवान् आप हमारे देवता और इस तरह बैठकर खाएँ अच्छा नहीं लगता अत: आप उस वट वृक्ष के नीचे पधारें। मैं चने और मठा अभी आपकी सेवा में हाजिर करता हूँ। कहते हुए उसने पंडित जी को जाकर चबूतरे पर बैठा दिया।

फिर तीसरे ने कहा मुझे नहीं जानते मैं सेठ कचौड़ीमल हूँ। किसान बोला - क्षमा करें आप भी सामने नीम के पेड़ के नीचे विराजिए। मैं शीघ्र ही आपकी सेवा में हाजिर होता हूँ। सेठ जी खुशी - खुशी नीम के पेड़ के नीचे जा बैठा। अन्त में चौथे ने अपना परिचय दिया। मैं नाई ठाकुर चिबटीराम हूँ, ऐसा सुनते ही किसान गरम हो गया। बोलने लगा - जमींदार साहब तो जमीन के मालिक ही हैं, पंडित जी हमारे देवता सारा खेत उन्हीं का है और सेठ जी हमें कर्ज, किराना न दें तो बच्चे भूखों मरेंगे। पर तेरी इतनी जुर्रत कि इनके साथ बैठकर मेरे खेत के चने खा रहा है। तूने धर्म-कर्म का भी ध्यान न रखा और डंडा उठाकर उसकी पिटाई करने लगा। कहने लगे, तीनों मित्र किसान ठीक कर रहा है। कहाँ यह नीच जाति का नाई और कहाँ हम, पिटने दो। बाद में चना और मठा हमें ही मिलेगा। जब नाई खूब पिट गया तो उसने भागने में ही अपनी भलाई समझी और गाँव की ओर भाग गया।

फिर किसान सेठ के पास पहुँचा और कहने लगा कि जमींदार की कृपा से हमारा घर चल रहा है और पंडित जी के हम चरण धोकर भी पिएँ तो कम है मगर तुमने हमारे ऊपर क्या उपकार किया। हमें कर्ज भी दिया तो जमीन रख ली ऊपर से इतना ब्याज लगाया कि पूरी जिन्दगी में कर्ज चुका न सकें। फिर तुमने मेरे खेत में घुसने की हिम्मत कैसे की। उठाया लट्ठ और उसकी जमकर पिटाई करने लगा।

जमींदार और पंडित सोचने लगे कि किसान सही कह रहा है पिटने दो साले को हम दो बचे तो अच्छा स्वागत-सत्कार होगा। वह भी पिटते-पिटते लहू लुहान हो गया तो वहाँ से भाग खड़ा हुआ। फिर किसान जमींदार के पास पहुँचा और कहने लगा पंडित जी तो हमारे कुल देवता जो कुछ सब उन्हीं का है किन्तु तू कहाँ का जमींदार, हमारी फसल आए न आए, तुझे तो लगान चाहिए, तेरे बाप-दादा होंगे जमींदार तू कैसे घुसा मेरे खेत में और डंडा उठाकर उसकी भी पिटाई शुरु कर दी।

पंडित सोचने लगा बिल्कुल ठीक कर रहा है यह तो नाम का जमींदार है दो कौड़ी तो जेब में है नहीं और मूछों पर ताव देता घूमता है। इसे भी पिटने दो। अब पूरे चना और मठा मुझे ही मिलेगा। बहुत जोरों की भूख भी लगी है और उसे पिटता हुआ देखता रहा। वह भी पिटकर वहाँ से भाग गया। पंडित जी अच्छे बढ़िया आसन लगाकर दुपट्टा संभाल कर बैठ गये और सोचने लगे अब निश्चित दान दक्षिणा भी मिलेगी और भर पेट भोजन भी। इतने में किसान पंडित जी के पास आया और सीधे चोटी पकड़ ली। पंडित जी चिल्लाए ये क्या कर रहा है नरक जाना है क्या ? पंडित जी का अपमान धर्म का अपमान है, छोड़ दे। किसान बोला - अरे! पंडित चोर की कोई जात नहीं होती। पहले ये बता अपने बाप का खेत समझ रखा है। और यह कहते हुए उसने पंडित जी की जमकर पिटाई कर दी। पंडित भी भागकर वहीं पहुँचा जहाँ तीनों मूर्ख अपने जख्मों पर घी और हल्दी को गर्म कर सिकाई कर रहे थे।

उसी समय वहाँ एक सज्जन पहुँचे तथा उनकी हालत को जानकर उसने कहा-तुम लोगों ने बहुत बड़ी गल्ती की है। पहले तो तुम्हें चोरी नहीं करनी थी, यदि चोरी की भी थी तो आपस में एकता से रहते, सो तुम रह नहीं पाए अत: इसी कारण तुम्हारी यह दुर्दशा हुई है।